# इकाई 12 सामाजिक परिवर्तन एवं रूपांतरण*

**संरचना**

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 सामाजिक परिवर्तन की अवधारणा

12.3 सामाजिक परिवर्तन के सिद्धांत

12.4 सामाजिक परिवर्तन के घटक

12.5 सामाजिक परिवर्तन की दर

12.6 सामाजिक परिवर्तन का प्रभाव

12.7 सारांश

12.8 संदर्भ

12.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

## 12.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन में आप समझ सकेंगे :

- सामाजिक परिवर्तन तथा सामाजिक रूपांतरण की अवधारणा;
- सामाजिक परिवर्तन के विभिन्न सिद्धांत;
- सामाजिक परिवर्तन के औपचारिक घटक;
- सामाजिक परिवर्तन की गति;
- सामाजिक परिवर्तन का मानव समाज पर प्रभाव; तथा
- सामाजिक परिवर्तन तथा भविष्य।

## 12.1 प्रस्तावना

इस इकाई में आपको सामाजिक बदलाव तथा सामाजिक रूपांतरण के बारे में समुचित जानकारी प्राप्त होगी। इसके लिए जरूरी है कि हम यह जान लें कि सामाजिक परिवर्तन व रूपांतरण की अवधारणा आखिर होती क्या है। इसके साथ ही साथ सामाजिक परिवर्तन के विभिन्न सिद्धांतों, घटकों तथा सामाजिक परिवर्तन के प्रभावों व पद्धतियों के बारे में भी जानकारी प्राप्त होगी। सामाजिक परिवर्तन एक सतत प्रक्रिया है जो सबके जीवन में घटित होती रहती है। इसका कारण यह है कि जिस समाज में हम रहते हैं वह लगातार बदलता रहता है। सामाजिक रूपांतरण की अवधारणा सामाजिक परिवर्तन से सीधी जुड़ी हुई है। कभी कभी दोनों को एक ही अर्थ में लिया जाता है, जबकि दोनों में मौलिक अंतर है। परिवर्तन की जटिलताओं को समझने में और उसकी व्याख्या करने में समाजशास्त्र हमारी मदद करता है।

*यह इकाई आर. वाशुम के द्वारा लिखी गयी है।

## 12.2 सामाजिक परिवर्तन एवं सामाजिक रूपांतरण की अवधारणा

सामाजिक परिवर्तन को अनेक रूपों में समझाया गया है तथा अनेक प्रकार से उसकी व्याख्या की गई है। प्रायः यह माना जाता है कि सामाजिक जीवन में उल्लेखनीय परिवर्तन समय-समय पर होते रहते हैं। यह कभी-कभी लगातार चलते रहते हैं, कभी अल्प अवधि के बाद तथा अल्प अवधि के लिए होते हैं और कभी-कभी दुहराये जाते रहते। सामाजिक परिवर्तनों की व्याख्या किसी सामाजिक संगठन और अथवा सामाजिक संरचना तथा समाज के कार्यों तथा उनके विभिन्न रूपों में होने वाले उल्लेखनीय बदलाव अथवा नवीनीकरण को सामाजिक परिवर्तनों के सुधार संज्ञा दी जाती है। सामाजिक परिवर्तन की उक्त परिभाषा सामाजिक संबंधों, सामाजिक पद्धतियों, क्रियाओं तथा अंतर क्रियाओं, संबंधों के नियमों और उनकी विशेषताओं, मूल्यों, प्रतीकों तथा सांस्कृतिक उत्पादों के विभिन्न तरीकों में घटित होने वाले विशिष्ट परिवर्तनों के विविध पहलुओं पर विशेष रूप से जोर देती हैं। सामाजिक परिवर्तन की अवधारणा समय के साथ संस्कृति के भौतिक व अभौतिक दोनों ही पहलुओं में आने वाले बदलावों को महत्व देती है। ये परिवर्तन समाजों के अंदर भी घटित होते हैं और बाहरी दबावों के कारण भी, इसके परिणामस्वरूप समाज का रूप बहुत बदल जाता है।

इस प्रकार सामाजिक रूपांतरण का समाज में होने वाले परिवर्तनों से सीधा और गहरा संबंध है। सामाजिक विज्ञानों में सामाजिक रूपांतरण शब्द का प्रयोग हाल के कुछ दशकों से ही देखने में आया है। इस अर्थ में यह अपेक्षाकृत नया है। सच कहें तो सामाजिक बदलाव का क्रांतिकारी रूप ही सामाजिक रूपांतरण है। यह समाज में दर्ज किया जाने वाला एक अधिक व्यापक और अधिक गहरा बदलाव है जिसका स्वरूप अलग दिखता है, इसीलिए इसे क्रांतिकारी माना जाता है। इसके फलस्वरूप जीवन के तौर-तरीके एक छोटी सी समयावधि में ही विशेष रूप से बदल जाते हैं। जबकि सामाजिक परिवर्तन मंथर गति से थोड़ा-थोड़ा सामाजिक ढांचों और सामाजिक संगठनों जैसे कि पारिवारिक संरचनाओं, विवाह की रस्मों तथा शैक्षिक संस्थानों आदि में निरंतर घटित होता रहता है। दूसरे शब्दों में कहें तो सामाजिक रूपांतरण समाज में होने वाला आधारभूत परिवर्तन है जब सामाजिक बदलाव समय के साथ धीमी गति से लगातार होता रहता है। आगे व्याख्या करते समय हम सामाजिक परिवर्तन को धीमी गति से होने वाले बदलाव तथा तीव्र गति से होने वाले क्रांतिकारी बदलाव (सामाजिक रूपांतरण) दोनों ही सन्दर्भों में इस्तेमाल करेंगे।

## 12.3 सामाजिक परिवर्तन के सिद्धांत

सामाजिक परिवर्तन तथा सामाजिक रूपांतरण के अनेक सिद्धांत हैं :

1) विकासात्मक सिद्धांत अथवा उद्विकासीय सिद्धांत;
2) चक्रात्मक सिद्धांत अथवा चक्रीय सिद्धांत;
3) संरचनात्मक-प्रकार्यात्मक सिद्धांत;
4) वर्ग संघर्ष का सिद्धांत।

### 1) उद्विकासीय सिद्धांत

सामाजिक परिवर्तन का विकास सिद्धांत अनेक सिद्धांतों का समूह है। इसमें शामिल सभी सिद्धांत अन्तर्सम्बन्धित हैं। उद्विकासीय सिद्धांत की प्रमुख अवधारणा यह है कि सभी मानव समाजों में सदा परिवर्तन होते रहते हैं। सभी परिवर्तनों की प्रवृति लगभग एक जैसी ही होती है। अपने उद्गम से विकास के चरण की ओर बढ़ते जाना या फिर

यह कहें कि सरल और आरंभिक दशा से जटिल एवं आधुनिक अवस्था की ओर बढ़ते जाना। उद्विकासीय सिद्धांत यह भी बताता है कि विकासमूलक परिवर्तन चरम अवस्था में पहुंचने के बाद चरम बिन्दु पर पहुँच जाता है। यह सिद्धांत बताता है कि समाज परिवर्तनशील है तथा यह सतत विकास करते जाना इसकी मूल प्रवृति है। उद्विकासीय सिद्धांत को दो मुख्य श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है- (क) पारंपरिक उद्विकासीय सिद्धांत (ख) नव उद्विकासीय सिद्धांत।

### क) पारंपरिक उद्विकासीय सिद्धान्त

इन सिद्धांतों का प्रादुर्भाव मानवविज्ञानियों तथा समाजशास्त्रियों के प्रयासों से 19वीं शताब्दी के आते आते हो चुका था। यद्यपि इन सभी विद्वानों की धारणाओं में एकरूपता नहीं है, फिर लगभग सभी विचार यह मानते हैं कि विकासमूलक परिवर्तन एकरेखीय एवं एकल दिशागामी होते हैं। जिस प्रकार एककोशिकीय जीव से विकसित होते-होते सभी जटिल संरचना वाली मानव देह अवस्था तक पहुंचता है, उसी प्रकार समाज आदि अवस्था से आधुनिकतम अवस्था तक पहुंचने के लिए सतत विकसित होता रहता है। समाज अस्तित्व में आते ही वृद्धि करने लगते हैं। समाज में रहने वाले लोग समय के साथ-साथ बदलते हुए विकास के अनेक आयाम लांघते हुए उसी प्रकार विशिष्ट हो जाते हैं जैसे करोड़ों देह कोशिकाएं मिलकर विशिष्ट देह प्रणाली का निर्माण करती हैं। उद्विकासीय सिद्धांतों के अधिष्ठाताओं में प्रमुख हैं अगस्तकॉम्ट, हरबर्ट स्पेंसर, ई.बी.टॉयलर, एच.जे.एस.मेन, जे. एफ.मैक लेनन और ऐस.जे.जी .फ्रेजर (ब्रिटिश उद्विकासीय स्कूल से), लेविस हेनरी मॉर्गन (अमेरिकी उद्विकासीय स्कूल से), और जे.जे.बाचोफेन, अडोल्फ बास्टियन और फर्डीनांड टोनीज ख्फर्डीनांड टोनीज, (जर्मन उद्विकासीय स्कूल से) इन सभी विचारकों ने मानव समाज की विकासमूलक प्रवृत्तियों पर उल्लेखनीय कार्य किए हैं।

ऑगस्ट कॉम्ट का मानना हैं कि सभी समाज विकास की तीन अवस्थाओं से गुजरते हैं– धार्मिक स्तर, आध्यात्मिक स्तर, प्रत्क्ष्यात्मक अथवा तार्किक स्तर।

हरबर्ट स्पेंसर डार्बिन की जैविक विकास के सिद्धांत में विश्वास रखता है और कहता है कि मानव समाज विकास के अनेक अवस्थाओं से गुजरते हुए छोटे-छोटे मानव समूहों तथा सरल सामाजिक ढांचों से निकलकर आधुनिक काल में मौजूद विशाल व जटिल सामाजिक संरचनाओं तक पहुंचा है। इसे सामाजिक डार्विनवाद भी कहा जाता है। ई. बी. टॉयलर के अनुसार सारी दुनिया के सभी मनुष्यों की सोच अपने अस्तित्व एवं विकास के मामले में लगभग एक जैसी होती है। इसे मानसिक एकता कहा जाता है। सभी मनुष्य एक जैसी विकासात्मक अवस्थाओं से गुजरते हैं। जिन्हें निम्न तीन अवस्थाओं में समझा जा सकता है– सर्वात्मकवाद, बहुदेववाद, एकेश्वरवाद। लेविस हेनरी मॉर्गन का मानना है कि मानव समाज अपनी विकास यात्रा के दौरान तीन अवस्थाओं से गुजरता है और अंततः तकनीकी नवीनीकरण की अवस्था तक पहुंचा है। ये तीन अवस्थाएं हैं – जंगलीपन, बर्बर अवस्था, और सभ्य अवस्था।

1) **नव उद्विकासीय विचारक** – सुप्रसिद्ध समाजशास्त्री बी. गार्डन. चिल्ड,जूलियन स्टीवर्ड तथा लेस्ली ह्वाइट ने उद्विकासीय सिद्धांतों में बीसवीं शताब्दी में संशोधन किये। इसके बाद उद्विकासीय सिद्धांतों का जो स्वरूप सामने आया वह पूरी तरह सह प्रमाण, सुव्यवस्थित तथा तर्क संगत था। उन्होंने अपने सिद्धांतों को पारंपरिक उद्विकासीय सिद्धांतों से अलग करने के लिए उन्हें नवीन उद्विकासीय सिद्धांत की संज्ञा दी और स्वयं को नव उद्विकासीय विचारक घोषित किया।

बी. गार्डन, चिल्ड ने अपने सिद्धांतों को तकनीकी विकास से जोड़ा। उन्होंने बताया कि संस्कृति का विकास चार प्रमुख अवधियों से गुजरता है। कांस्य युग तथा लौह युग उनके उद्विकासीय सिद्धांत के अनुसार विकास की प्रकृति रेखीय है जिसे वैश्विक उद्विकासवाद भी कहा जाता है।

लेस्ली हाइट सांस्कृतिक विकास को मनुष्य की ऊर्जा का समुचित प्रबंधन मानते हैं। उसकी सांस्कृतिक विकास का मौलिक सिद्धांत यह है कि संस्कृति का विकास मनुष्य के द्वारा होता ही तब है जब मनुष्य की प्रति वर्ष ऊर्जा संचयन की मात्रा में वृद्धि होने लगती है। मनुष्य की तकनीकी दक्षता का अर्थ है उसका अपनी ऊर्जा को अधिक से अधिक काम में लगाना। दोनों घटक ऊर्जा संचयन एवं तकनीकी विकास साथ-साथ चलते रहते हैं और दोनों में लगातार वृद्धि होती रहती है। नवीन उद्विकासवादी जूलियन स्टीवर्ड ने बहुरेखीय विकास के सिद्धांत को जन्म दिया। एकरेखीय तथा वैश्विक सिद्धांत के अस्तित्व को स्वीकार करते हुए उन्होंने अपने सिद्धांत की घोषणा की। बहुरेखीय विकास से स्टीवर्ड का तात्पर्य यह है कि विभिन्न सांस्कृतिक क्षेत्र तथा सांस्कृतिक उपक्षेत्रों में सांस्कृतिक विकास की अवस्थाओं की पद्धतियां भिन्न-भिन्न होती हैं।

मार्शल डी सहलिंस तथा एलमन सर्विस ने विशिष्ट तथा सामान्य विकास की अवधारणा को जन्म दिया और इसके द्वारा विकास के विभिन्न सिद्धांतों के बीच सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया। इन सिद्धांतों का मुख्य दावा था कि विकास की धारा को जैविक पक्ष तथा सांस्कृतिक पक्ष दोनों दिशाओं की ओर साथ-साथ प्रवाहित किया जा सके।

### 2) चक्रीय सिद्धांत

चक्रीय सिद्धांत एक लंबी समयावधि में बार-बार बदलती परिस्थितियों, घटित होती घटनाओं, बदलते रूपों तथा पहनावे की शैलियों से विशेष रूप से सरोकार रखता है। यद्यपि विभिन्न समयावधियों में परिवर्तन के स्वरूप अलग-अलग देखे गए हैं। चक्रीय सिद्धांतकार मानते हैं कि समाज परिवर्तन के अनेक दौरों से गुजरते हैं। विभिन्न समयावधियों में परिवर्तन के विभिन्न दौर देखे जा सकते हैं। कोई भी परिवर्तन समाज को पूर्णावस्था में नहीं पहुंचा पाता है। देखने में यह आया है कि बदलाव का यह दौर व्यक्तियों, समाजों को आगे चलकर उसी स्थिति में ला खड़ा करता है जहां से बदलाव का दौर शुरू हुआ था। इसके बाद फिर उसी प्रकार परिवर्तन का अगला चक्र शुरू हो जाता है। ए एल क्रोबरचक्रीय पद्धति का शास्त्रीय विश्लेषण पश्चिमी देशों में स्त्रियों की कपड़ों में आने वाले परिवर्तनों को केंद्र में रखकर करता है। क्रोबरने देखा कि पश्चिमी देशों में स्त्रियां लंबे समय तक एक खास तरह के कपड़े पहनती हैं और उसके बाद अलग तरह के। इनमें भी एक अवधि के बाद परिवर्तन आ जाता है। इस प्रकार के चक्रीय क्रम में उनके कपड़ों से जुड़ी रुचियों में बदलाव आते रहते हैं जो बार-बार एक अवधि के बाद दोहराएं जाते हैं। ओसवाल सपेंजलर का विचार है कि सभ्यताएं उत्पन्न होती हैं, फिर विकसित होती हैं और एक अवधि के बाद उनमें क्षरणा की प्रक्रिया आरंभ हो जाती है। उदाहरण के लिए रोमन साम्राज्य बना, बहुत ही शक्तिशाली हुआ और फिर धीरे-धीरे उसका पतन हो गया। इसी चक्र से ब्रिटिश साम्राज्य भी गुजरा। पिटीरिम सोरोकिन का मानना था कि सभी महान सभ्यताएं तीन सांस्कृतिक क्रम से गुजरती हैं जो पूरी तरह चक्रीय होते हैं। (1) विचारात्मक संस्कृति, आस्था और रहस्य उद्घाटन पर आधारित समाज (2) आदर्शवादी संस्कृति, अनुभववाद तथा अलौकिक विचारों को मानने वाला समाज (3) अनुभवों के आधार पर चलने वाला

समाज। उसका यह भी मानना था कि सभी समाज अनिवार्य रूप से क्षरित नहीं होते बल्कि विकास की विभिन्न अवस्थाओं से गुजरते हुए अपनी आवश्यकताओं के अनुसार चक्र बदलते रहते हैं।

महान सभ्यताओं का अध्ययन करने के बाद अर्नाल्ड टायनबी इस नतीजे पर पहुंचे थे कि सभ्यताएं जन्मती हैं, विकसित होती हैं, क्षरित होती हैं और मर जाती हैं। उनका विश्वास था कि वर्तमान में पश्चिम सभ्यता अब क्षरण की अवस्था की ओर जा रही है। विल्फ्रेडो पीएर्टो ने राजनैतिक कुलीनों का अध्ययन किया था और उसके आधार पर कुलीनों ने चक्रीय क्रम में बदलने के बारे में अपने विचार प्रकट किए। उन्होंने राजनीतिक कुलीनों को दो श्रेणियों में बांटा एक लोमड़ी की प्रवृत्ति वाले राजनैतिक कुलीन और दूसरे शेर की प्रवृत्ति वाले राजनैतिक। इन दोनों की राजनैतिक शक्ति प्राप्त करने और उसे अपने नियंत्रण में रखने के तरीके एक दूसरे से बिल्कुल अलग होते हैं। पहली प्रकार के राजनीतिज्ञ छल कपट और धूर्तता से राजनैतिक शक्ति प्राप्त करते हैं और उसी शैली में उस पर अपना कब्जा बनाए रखते हैं। जबकि दूसरे प्रकार के राजनीतिज्ञ सत्ता प्राप्त करने के लिए सैन्य शक्ति का खुला प्रयोग करते हैं। इसी प्रकार इन राजनीतिज्ञों की एक दूसरे को सत्ता से हटाने और पुनः सत्ता प्राप्त करने के तरीके चक्रीय होते हैं। जैसे शेर की प्रवृत्ति वाले राजनीतिज्ञ लोमड़ी की प्रवृत्ति वाले राजनीतिज्ञों को सैन्य बल द्वारा सत्ता से हटा देते हैं और संपूर्ण आधिपत्य बनाए रखते हुए बल पूर्वक शासन करते रहते हैं। जबकि लोमड़ी की प्रवृति वाले राजनीतिज्ञों को फिर से सत्ता में आना होता है तो वे शेर की प्रवृति वाले राजनीतिज्ञों को हराने के लिए राजनैतिक गठबंधन करते हैं और अपनी ताकत बढ़ाते हुए तरकीब से सत्ता हथिया लेते हैं लेकिन यह हमेशा सत्ता में नहीं बने रह सकते। सिंह प्रवृत्ति वाले राजनीतिज्ञ फिर से सैन्य बल का इस्तेमाल करते हैं और लोमड़ी प्रवृत्ति के राजनीतिज्ञों से फिर सत्ता छीन लेते हैं। सत्ता परिवर्तन का यह चक्रीय रूप से लगातार चलता रहता है।

### 3) संरचनात्मक प्रकार्यात्मक सिद्धांत

ढांचागत क्रियात्मक सिद्धांत सामाजिक परिवर्तन के छोटे तथा मझोलेस्तर के परिवर्तनों से सीधे जुड़े होते हैं। इन सिद्धांतों को मानने वाले विचारक समाज को मानव-शरीर की तरह मानते हैं। जैसे शरीर विभिन्न अंगों के संतुलित कार्यों से क्रियाशील रहता है, उसी प्रकार समाज के विभिन्न संस्थान एक दूसरे के साथ समरसता बनाए रखते हुए सामाजिक ढांचे को बनाए रखते हैं। ये विद्वान मानते हैं कि परिवर्तन लगातार होता रहता है। ये परिवर्तन तब तक समाज के ढांचे को बार-बार बनाते बिगाड़ते रहते हैं जब तक समाज सांस्कृतिक स्वरूप प्राप्त नहीं कर लेता। इनमें से उन परिवर्तनों को समाज स्वीकार भी करते हैं और आत्मसात भी करता है जो उनके लिए उपयोगी होते हैं। गैर उपयोगी परिवर्तनों को समाज स्वीकार नहीं करते। जब-जब गैर जरूरी बदलावों के कारण सामाजिक संतुलन गड़बड़ाता है, सामाजिक संस्थान तमाम गड़बड़ियों को दुरस्त कर फिर से सामाजिक संतुलन स्थापित कर देते हैं। जैसे प्राकृतिक आपदा, भूखमरी, शरणार्थियों के बड़ी संख्या में घुस आने, अथवा युद्ध की स्थिति उत्पन्न हो जाने पर सामाजिक संतुलन भंग हो जाता है और सामाजिक संस्थानों पर फिर से इस संतुलन को स्थापित करने का दायित्व आ पड़ता है।

रोबर्ट मर्टन का विचार है कि सभी बड़े सामाजिक ढांचें या तो अपने आप में समय रहते आवश्यक सुधार कर लेते हैं या फिर नष्ट हो जाते हैं। जो समाज किसी भी हालात में बदलने से इनकार कर देते हैं उनका अपने अस्तित्व को ज्यों का त्यों बनाए रखना मुश्किल हो जाता है।

### 4) वर्ग संघर्ष का सिद्धांत

इन सिद्धांतों में विश्वास रखने वाले विचारक यह मानते हैं कि जब समाज में संसाधनों का वितरण असमान होता है और उनके बीच बड़े अंतराल आ जाते हैं तो समाज में तनाव पैदा हो जाता है, असहमति उत्पन्न हो जाती है और टकराव बढ़ने लगते हैं। वर्ग संघर्ष के सिद्धांतों को मानने वाले विचारक कहते हैं कि सभी समाज तरक्की करना चाहते हैं। जब शोषित वर्ग अपनी जीवन दशा सुधार लेते हैं तो सामाजिक विकास होता है और टकरावों की संभावना बढ़ने लगती है। उनका विश्वास है कि हर समाज में नीचे से ऊपर उठने की प्रवृत्ति होती है। वे मानते हैं कि टकराव बेहतर समाज निर्माण के लिए जरूरी घटक हैं। वे यह भी मानते हैं कि सामाजिक टकरावों के बिना परिवर्तन नहीं होते, टकराव परिवर्तन में सहयोगी होते है।

वर्ग संघर्ष के सिद्धांत को जन्म देने का श्रेय मुख्यतः कार्ल मार्क्स को जाता है। उनके बाद जितने भी विचारक आए जिनका विश्वास वर्ग संघर्ष के सिद्धांत में था, वे सब कार्ल मार्क्स के पदचिन्हों पर ही चले। कार्ल मार्क्स का सिद्धांत पूंजीपति तथा सर्वहारा के बीच उत्पन्न होने वाले वर्ग संघर्ष तथा उसके परिणामों पर आधारित है। कार्ल मार्क्स समाज को एक ऐसा संगठन मानता है जिसमें दो विरोधी वर्ग निवास करते हैं एक शोषक दूसरा शोषित। कार्ल मार्क्स का मानना था कि जब तक पूंजीवादी व्यवस्था रहेगी तब तक शोषित वर्ग शोषक वर्ग के खिलाफ निरंतर संघर्ष करता रहेगा। कार्ल मार्क्स का विश्वास था कि दोनों वर्गों के बीच टकराव से समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन होंगे और फिर एक ऐसा समाज बन जाएगा जिसमें वर्गों के लिए कोई जगह नहीं होगी यह मानव समाज की उच्चवस्था होगी।

कार्ल मार्क्स पहला विचारकथा जिसने हेगल के द्वंदात्मक सिद्धांत का विश्लेषण किया। सामाजिक परिवर्तन की द्वंदात्मक पद्धति न तो एक रेखीय परिवर्तन का समर्थन करती है न ही चक्रीय परिवर्तन का। यह सिद्धांत यह मानता है कि विरोध और संघर्ष के फलस्वरूप नए सामाजिक ढांचे का जन्म होता है। परंपरागत समाज में जब शोषक और शोषित के बीच संघर्ष होता है तो नए समाज का जन्म होता है इस प्रकार यथास्थिति से विरोध उत्पन्न होता है और विरोध के फलस्वरूप जो संघर्ष पैदा होता है वो सामाजिक स्थिरता को जन्म देता है लेकिन यह स्थिरता अथवा समरसता हमेशा बनी नहीं रहती। समाज में फिर विभिन्न कारणों में से फिर और फिर वर्ग संघर्ष की स्थिति बनती है और परिणामस्वरूप फिर से वर्गहीन समरस समाज विकसित हो जाता है। वर्ग संघर्ष के सिद्धांत में विश्वास रखने वाले विद्वान यह मानते हैं कि समाज में यह प्रक्रिया बार-बार दोहराई जाती रहती है। आधुनिक युग के विचारक ऊपर बताये गए सभी सामाजिक परिवर्तन के विभिन्न सिद्धांतों को कहीं न कहीं मान्यता देते है।बहुत कम विचारक ऐसे हैं जो इन सिद्धांतों से हटकर अपने नए मौलिक सिद्धांतों को जन्म दे पाए हैं। ऐसे विचारकों की संख्या भी बहुत कम है जो यह मानते हैं कि सामाजिक परिवर्तनों से सदैव सामाजिक विकास ही होता है अथवा समाज का पतन और क्षरण आवश्यक रूप से होता है। फिर भी आमतौर पर लोगों का यह मानना है कि समाज बदलते हैं और उनके पीछे सामाजिक परिस्थितियां किसी न किसी रूप में विद्यमान रहती हैं और समाज के बाहर भी, व्यवस्थि तभी हो सकती हैं और अव्यवस्थित भी। ज्यादातर विचारक हैं जो यह मानते हैं कि सभी सामाजिक परिवर्तन अच्छे या बुरे की श्रेणी में नहीं आते। वे सभी इस मामले में एकमत हैं कि संतुलित व समरस समाज द्वंदों से भरे और हाय तौबा वाले समाजों की तुलना में अच्छे होते हैं। यद्यपि सामाजिक स्थिरता कभी-कभी शोषण, दमन और अन्याय को भी जन्म देती है। ऐसी स्थिति में जब समाज में अन्याय और शोषण बढ़ता ही जा रहा हो तब बेहतर है

कि शोषित व दमित वर्ग शोषण व दमन के खिलाफ आवाज उठाएं और टकराव की स्थिति पैदा हो। इससे समाज अपने आप को बदलने के लिए विवश हो जाएगा और इस बात की संभावना रहेगी परिणामस्वरूप बेहतर समाज का जन्म हो। इस प्रकार परिवर्तन समाज के लिए जरूरी है और प्रायः यह माना जाता है कि इसका परिणाम अच्छा ही होगा। परिवर्तन और स्थिरता दो ऐसी अवस्थाएं हैं जो एक दूसरे से जुड़ी होती हैं और किसी भी समाज में घटित होती रह सकती हैं।

**बोध प्रश्न 1**

1) समाजशास्त्र किस मामले में हमारी सहायता करता है?

   a) समाज में होने वाले जटिल परिवर्तनों को समझने में।

   b) सामाजिक परिवर्तनों को रोकने में।

   c) सामाजिक परिवर्तनों को बढ़ावा देने में।

2) सामाजिक परिवर्तन क्या होता है? 2 पंक्तियों में उत्तर दीजिए।

.....

.....

.....

.....

## 12.4 सामाजिक परिवर्तन के घटक

समाजों में विभिन्न कारणों से परिवर्तन आते हैं। यह कारण परिवर्तनों की प्रकृति तथा उनकी रफ्तार को तय करते हैं। समाज में परिवर्तन लाने वाले घटकों को चार भागों में बांटा जा सकता है।

1) जैविक घटक
2) भौगोलिक घटक
3) तकनीकी घटक
4) सामाजिक व सांस्कृतिक घटक

### 1) जैविक घटक

जैविक घटकों के कारण समाज में जो परिवर्तन आते हैं उन्हें दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। एक, गैर मानवीय जैविक घटक तथा दूसरा , मानवीय जैविक घटक।गैर मानवीय जैविक घटकों में पेड़-पौधे तथा जानवर आते हैं।ये दोनों घटक मानव जीवन को विभिन्न प्रकार से प्रभावित करते हैं। जीवित रहने के लिए मनुष्यों को पेड़ पौधों और जीवधारियों की जरूरत पड़ती है। मनुष्य इनसे अपना भोजन, वस्त्र, औषधियां तथा अनेक अन्य प्रकार के संसाधन विभिन्न रूप में प्राप्त करते हैं। हानिकारक वनस्पतियों तथा जानवरों को मनुष्य पसंद नहीं करते और वे उन्हें या तो नष्ट कर डालते हैं या फिर उनसे दूरी बनाकर रखते हैं। इतना ही नहीं मनुष्यों को सांस लेने के लिए अप्रत्यक्ष रूप से वनस्पतियों और जीवधारियों की आवश्यकता होती है। मनुष्य तथा पेड़-पौधों का जीवन एक दूसरे पर निर्भर होते है। मनुष्य तथा अन्य प्राणी आक्सीजन ग्रहण करते हैं और कार्बन डाइऑक्साइड छोड़ते हैं। पेड़ पौधे मनुष्यों

द्वारा छोड़ी गई कार्बन डाइऑक्साइड की मदद से प्रकाश संश्लेषण की क्रिया द्वारा अपना भोजन तैयार करते हैं। जैविक पर्यावरण सदा बदलता रहता है तथा एक प्राणी अपने-आप को जिंदा रखने के लिए दूसरे प्राणी को नष्ट करता रहता है। जीवित रहने के लिए जो संघर्ष की प्रक्रिया चलती रहती है उसके दौरान अनेक प्रजातियां नष्ट होती हैं तथा उनके स्थान पर अनेक प्रजातियां उत्पन्न हो जाती हैं। विभिन्न प्रजातियों के जीवन संघर्ष विभिन्न प्रकार के भौगोलिक घटकों से भी प्रभावित होते रहते हैं। जैसे अत्यधिक जलवायु परिवर्तन, मिट्टी की संरचना में खास प्रकार के परिवर्तन, भूक्षरण, झीलों, नदियों तथा अन्य अनेक प्रकार की जल धाराओं का सूख जाना। पर्यावरण में ऐसे परिवर्तनों के कारण कई बार अनेक प्रकार की प्रजातियां समाप्त हो जाती हैं और उनके स्थान पर नई प्रजातियां जन्म ले लेती है। पर्यावरण व्यवस्था में होने वाले इस प्रकार के परिवर्तन मानव समाज को भी प्रभावित करते हैं ... और मनुष्यों के जीवित करने के लिए किए जाने वाले संघर्षों के आयाम बदल जाते हैं। आधुनिक युग में मनुष्यों ने पर्यावरण पर नियंत्रण रखने के अनेक तरीके विकसित कर लिये हैं जिससे मनुष्य अपने अस्तित्व को विपरीत परिस्थितियों में भी बनाए रखने में सफल हो रहा है। उसने अनेक प्रजातियों को अपने अधीन कर लिया है और अपने अनुकूल बना लिया है। अनेक प्रकार की ऐसी तकनीक उत्पन्न कर ली हैं जो जैविक घटकों को अनुकूल बना लिया हैं। फिर भी अनेक ऐसी चीजें है जिस पर मनुष्यों का बस नहीं है, जैसे सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा उत्पन्न होने वाली बीमारियां। ये घटक मनुष्यों के सामने कठिनाइयां पैदा कर रहे हैं।

मानवीय जैविक घटक दो तरह से सामाजिक परिवर्तन को प्रभावित करता है -

1) मनुष्यों के अनुवांशिक गुणों को प्रभावित करते हैं।

2) समाज विशेष की जनसंख्या घनत्व जनसंख्या की संरचना को प्रभावित करते हैं।

अनुवांशिक गुण पर पड़ने वाला प्रभाव इतना अधिक नहीं होता जितना जनसंख्या के कारण मानव समाज पर पड़ने वाला प्रभाव होता है। मनुष्यों का बौद्धिक स्तर तथा अन्य क्षमताएं अन्य जीवधारियों की तुलना में सामाजिक व सांस्कृतिक विकास की प्रक्रिया को अधिक प्रभावित करती हैं। मनुष्य का अनुवांशिक गुण एक ओर मनुष्य की जनसंख्या तथा उसकी संरचना को प्रभावित करता है, दूसरी ओर अगली पीढ़ी की अनुवांशिक गुणवत्ता पर प्रभाव डालता है। इस प्रकार मनुष्य सदा बदलते रहते हैं। अनुवांशिक घटक की तुलना में जनसंख्या में परिवर्तन का सामाजिक बदलाव पर गहरा प्रभाव पड़ता है। जनसंख्या में वृद्धि तथा संरचना की प्रकृति मनुष्य के सामाजिक व सांस्कृतिक जीवन को विभिन्न कारणों से प्रभावित करते रहते हैं। अब क्योंकि मनुष्य ने नई तकनीकों का विकास कर लिया है और स्वास्थ्य एवं स्वच्छता के नये नये खोज निकाल पाए हैं। इससे पिछली दो शताब्दियों से मृत्यु दर में गिरावट आई है तथा जीवित रहने की संभावनाओं में हुई वृद्धि से मनुष्य की औसत आयु बढ़ गई है। परिणामतः विश्व भर में जनसंख्या में उछल आ गया है। जनसंख्या का स्थानांतरण भी समाज में बदलाव लाता है। इससे पर्यावरण पर असर पड़ता है। सांस्कृतिक सम्मिसरण तथा विसरण के कारण सामाजिक टकराव की स्थिति भी उत्पन्न हो जाती है। जनसंख्या बढ़ती जाए और खाद्यान्न के उत्पादन में उसी अनुपात में वृद्धि न हो तो अनेक प्रकार की समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं-अकाल और युद्ध की स्थिति भी आ सकती है।

अधिक अन्न उत्पादन द्वारा स्थितियों से निपटने के लिए उत्पादन की नई-नई प्रौद्योगिकियों को जन्म देना समय की मांग बन जाती है। खेती के नये नये तरीके चलन में आ जाते हैं।

### 2) भौगोलिक घटक

भौगोलिक परिवर्तन भी सामाजिक परिवर्तन लाते हैं। दुनिया भर में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं जब भौगोलिक परिवर्तन के कारण सामाजिक संरचना व लोगों के स्वभावों में सामाजिक परिवर्तन आए। ज्वालामुखी फटने से पौम्पी में संपूर्ण विनाश हो गया। 1840 में आलू-अकाल के कारण आयरलैंड के निवासियों को भागकर अमेरिका में शरण लेनी पड़ी। प्राकृतिक आपदायें पर्यावरण में भी बदलाव लाती हैं और सामाजिक संरचना में भी। कभी-कभी प्राकृतिक आपदाओं के शिकार लोग अपने रिश्तेदारों तथा दोस्तों को खो बैठते हैं , उनके संसाधन नष्ट हो जाते हैं और वे मानसिक आघात के कारण भीषण पीड़ा झेलने पर विवश हो जाते हैं। वे अपने समाज से कट जाते हैं और उन्हें फिर से नए समाज का निर्माण करना पड़ता है। पारिस्थितिकी में आया परिवर्तन भी आधुनिक काल में सामाजिक परिवर्तन का बड़ा कारण है। अनेक पारिस्थितिक परिवर्तनों का जनक स्वयं मनुष्य ही है। किसी क्षेत्र विशेष में जनसंख्या का घनत्व बढ़ना प्राकृतिक संसाधनों का दोहन, सामाजिक एवं राजनैतिक टकराव, जंगलों का कटना, बड़े-बड़े बांधों का निर्माण आदि सब आज की दुनिया में बड़े सामाजिक बदलाव के कारण बने हुए हैं। ये परिवर्तन आबादी के स्थानांतरण तथा प्राकृतिक विनाशों से भी अधिक प्रभावकारी हैं।

### 3) तकनीकी घटक

प्रौद्योगिकी सामाजिक परिवर्तन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। आज की दुनिया में यह बहुत बड़ा सच है। प्रागैतिहासिक युग में परिवर्तन बहुत धीमी गति से होता था। तब हमारे पूर्वज पत्थरों के औजारों से दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति किया करते थे। प्रौद्योगिकी के विकास के कारण हमारे युग में परिवर्तन की गति बहुत तेज हो गई है। आधुनिक तकनीकी आविष्कारों ने उत्पादन के तरीकों तथा उत्पादन के संदर्भों को तेजी से बदल डाला है, और पुराने पारंपरिक सामाजिक ढांचे, विचार व परंपराएं विश्वास व धारणायें आदि काफी बदल चुके हैं। प्रौद्योगिकी मौलिक पर्यावरण को बदल डालती है, और मनुष्य समाज उसे स्वीकार करने पर विवश होते हैं। एक ओर प्रौद्योगिकी मनुष्य समाज के लिए एक वरदान साबित हुई है, दूसरी ओर उसके कुछ नकारात्मक पहलू भी हैं। प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल संतुलन व संयम के साथ, जरूरी जानकारी के साथ न किये जाये तो वह भारी विनाश का कारण बन जाती है। समाज पर प्रौद्योगिकी के गलत इस्तेमाल के दुष्परिणाम सामाजिक संस्थानों व सामाजिक ढांचों पर स्पष्ट दिखाई दे रहे हैं। सामुदायिक जीवन का विघटन एक बड़ा नकारात्मक परिणाम है। इसके कारण लोग अकेले पड़ते जा रहे हैं। सामाजिक समरसता एवं सरोकारों को इससे भारी क्षति हो रही है।

### 4) सामाजिक एवं सांस्कृतिक घटक

सामाजिक व सांस्कृतिक घटक समाजों में बदलाव लाने में बड़ी भूमिका निभाते हैं। मनुष्य स्वयं सामाजिक बदलाव के लिए अत्यधिक जिम्मेदार होता है। अनुसंधान, नई नई खोजें, सांस्कृतिक सम्मिश्रण, सामाजिक आंदोलन आदि सामाजिक ढांचों में बड़े बदलाव लाते हैं। किसी समाज विशेष के लोगों में नवीनीकरण की आकांक्षा, उनके मूल्य, धारणाएं एवं दृष्टिकोण समाज में बड़ा बदलाव लाते हैं। नवीनीकरण की प्रक्रिया में नई-नई खोजों एवं आविष्कारों का बड़ा योगदान रहता है। इसके फलस्वरूप समाज में आमूल-चूल परिवर्तन हो जाता है। यद्यपि आविष्कार उन तथ्यों या चीजों की जानकारी प्राप्त करने के अलावा और कुछ नहीं है जो मनुष्य को अब तक ज्ञात नहीं थीं, फिर भी उनसे समाज की सोच व शैली तथा ढांचों में भारी बदलाव आता है।

वर्णमालाओं के आविष्कार, राज्यों के आधुनिक ढांचों का निर्माण तथा नवीन प्रौद्योगिकियों के विकास से बड़े पैमाने पर सामाजिक बदलाव आएं हैं। संस्कृतियों का एक समूह से दूसरे समूह में विसरण सामाजिक परिवर्तन को जन्म देता है। ज्यों-ज्यों लोग आधुनिकीकरण के कारण नए-नए लोगों के संपर्क में तेजी से आते जा रहे हैं, त्यों-त्यों समाजों के अंदर तथा विभिन्न समाजों के बीच संबंधों की संरचनाएं बदल रही हैं और सामाजिक परिवर्तन की गति बढ़ती जा रही है। विसरण की प्रक्रिया मनुष्यों के बीच बढ़ती एकाकीपन की प्रवृत्ति को बेध पाने में असमर्थ है।

सामाजिक आंदोलन भी सामाजिक परिवर्तनों में बड़ी भूमिका निभाते हैं। सामाजिक आंदोलनों को दो विभिन्न रूपों में समझा जा सकता है। कुछ आंदोलनों का उद्देश्य पुराने सामाजिक ढांचों को तोड़कर उनके स्थान पर नए सामाजिक ढांचों का निर्माण करना होता है। ऐसे आंदोलन क्रांतिकारी प्रकृति के होते हैं। कुछ आंदोलन सुधारवादी होते हैं जिनका उद्देश्य पारंपरिक ढांचों में रचनात्मक परिवर्तन करना होता है।

दोनों ही मामलों में सामाजिक परिवर्तन उनकी सफलताओं पर निर्भर करते हैं। क्रांतिकारी आंदोलनों में फ्रांसीसी क्रांति 1789 तथा रूसी क्रांति 1917 वैश्विक स्तरीय आंदोलनों में आते हैं जो समाजों को आमूल-चूल बदल डालने में सफल हुए।

**बोध प्रश्न 2**

1) सामाजिक परिवर्तन के लिए जिम्मेदार किन्हीं तीन घटकों के नाम बताइए।(दो पंक्तियों में उत्तर दीजिये)

.....

.....

.....

.....

2) क्या सांस्कृतिक विसरण सामाजिक परिवर्तन का एक कारण है? 'हां' या 'न' पर निशान लगाए।

हां न

## 12.5 सामाजिक परिवर्तन की दर

समाज में परिवर्तन सदैव जारी रहता है, परन्तु उसकी दर सदैव एक सी नहीं होती। अतीत काल में बदलाव की गति बहुत धीमी थी, परन्तु इस समय गति बहुत तेज है। बदलाव में तेजी आने की अनेक वजहें हैं, जैसे विभिन्न प्रौद्योगिकियों के आविष्कार, सांस्कृतिक विसरण एवं सम्मिश्रण, सामाजिक क्रांतियां आदि। सांस्कृतिक विचार चाहे भौतिक हो या अभौतिक दोनों ही प्रकार के सांस्कृतिक प्रभावों का तेजी सी प्रसार हुआ है। इसका कारण है बेहतर तकनीकों तथा बेहतर संपर्क के साधनों का आविष्कार। आधुनिक युग में बड़े पैमाने पर शिक्षा, मीडिया, बाजार तथा संपर्क संसांधनों के सरलीकरण एवं प्रसार से सामाजिक जीवन में तेजी से बदलाव आता जा रहा है। सामाजिक तथा सांस्कृतिक क्रांतियां सामाजिक परिवर्तन की गति तेज कर देती है। क्रन्तिकारी सामाजिक परिवर्तन समाज और राज्यों में ऐसे परिवर्तन लाते हैं जिनका प्रभाव व्यापक रूप से दिखने लगते हैं। समाजवाद, लोकतंत्र, स्वयं फैसला लेने की प्रवृतियों में तेजी आने से सामाजिक परिवर्तन की गति बढ़ जाती है।

इसके बावजूद सभी समाजों में परिवर्तन की गति और शैली एक जैसी नहीं होती। एक ही समाज में कही परिवर्तन की गति तेज होती है कही मंद।

## 12.6 सामाजिक परिवर्तन का प्रभाव

समाज विज्ञानियों, खासकर समाजशास्त्रियों के लिए मानव समाज पर सामाजिक परिवर्तन के प्रभाव का अध्ययन सदैव एक महत्वपूर्ण विषय रहा है। इस प्रभाव को दो स्तरों पर देखा और समझा जा सकता है। मानव समाज पर व्यक्तिगत प्रभाव तथा मानव समाज पर सामूहिक प्रभाव। यद्यपि सामाजिक परिवर्तन के मानव समाज पर पड़ने वाले प्रभाव के बारे में समाज शास्त्री कभी एकमत नहीं रहे। कुछ समाज शास्त्रियों का विचार है कि औद्योगीकरण की प्रक्रिया मनुष्यों को एक दूसरे से अलग कर देती है क्योंकि उनके कार्यों की प्रकृति इतनी अलग-अलग प्रकार की हो जाती है कि उनकी सामूहिकता प्रभावित हुए बिना नहीं रहती। कार्ल मार्क्स का विचार था कि औद्योगीकरण लोगों को उनके कार्यों से अलग कर देगा क्योंकि जो उत्पादन वे करते हैं उसके मालिक वे स्वयं नहीं होते बल्कि कारखानों के मालिक होते हैं। कुछ समाजशास्त्री यह भी मानते हैं कि औद्योगिक समाज मनुष्य के सामाजिक जीवन को प्रभावित अवश्य करेगा। फर्दीनंद टोनीज तथा मैक्स वेबर उन विचारकों में से हैं जो यह मानते हैं कि औद्योगीकरण मनुष्यों के रिश्ते पर बुरा प्रभाव डालता है। कुछ समाजशास्त्री, जैसे एमिली दर्खाइम का मानना है कि औद्योगीकरण से समाज में जटिलता उत्पन्न होती है, कार्यों का विभाजन होता है और इससे उनके आपसी रिश्तों में सदभाव उत्पन्न होता है। लोगों को व्यक्तिगत स्वतंत्रता का आभास होने लगता है और सामाजिक अखंडता में भी वृद्धि होती है। आधुनिक ज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के कारण मनुष्य जीवन में अनेक प्रकार की समस्याओं का जन्म हुआ है और लोगों में चिंता का स्तर बढ़ गया है। औद्योगीकरण से गाड़ियों और मशीनों के अधिक इस्तेमाल के कारण जहरीली गैसें उत्पन्न होती हैं और वायु प्रदूषण का स्तर बढ़ जाता है। वह भौतिक पर्यावरण जिस पर जिंदा रहने के लिए मनुष्य निर्भर करता है भी प्रदूषण के कारण नष्ट हो जाता है। ईंधन की अधिक मांग तथा उर्जा उत्पन्न करने वाले संसाधनों की अधिक मांग के कारण विभिन्न समुदायों तथा देशों के बीच तनाव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है और कभी-कभी युद्ध का कारण भी बन जाती है। परमाणु हथियारों तथा अन्य प्रकार के घातक हथियारों के आविष्कार से मानव समाज का अस्तित्व ही खतरे में पड़ जाता है। इससे लोगों में असुरक्षा की भावना पैदा हो जाती हैं। कभी-कभी विभिन्न देशों के बीच विनाशकारी हथियारों की होड़ इतनी बढ़ जाती है कि उसे देखकर लगता है कहीं हम मानव सभ्यता के विनाश की ओर तो नहीं बढ़ रहे। क्योंकि सुरक्षा और अनिश्चितता का अनुपात निरंतर बढ़ता चला जाता है और ऐसा लगने लगता है कि घातक हथियारों की होड़ कहीं तृतीय विश्व युद्ध तो नहीं करा देगी। यदि ऐसा हुआ तो मानव सभ्यता का अस्तित्व क्यों कर बचेगा?

**बोध प्रश्न 3**

1) क्या सभी समाजों में सामाजिक परिवर्तन की दर एक जैसी होती है?सही या गलत पर निशान लगाइए।

   सही  गलत

2) केवल 5 पंक्तियों में समाज पर सामाजिक परिवर्तन के प्रभाव का वर्णन कीजिए।

   .....

   .....

   .....

## 12.7 सारांश

सामाजिक परिवर्तन सभी मनुष्यों के जीवनों में आवश्यक रूप से होता है। इसे सामाजिक संगठन, सामाजिक ढांचों तथा सामाजिक क्रियाकलापों के संदर्भ में महसूस किया जा सकता है। सामाजिक परिवर्तन का एक रूप सामाजिक रूपांतरण भी है। इसके लिए क्रांतिकारी परिवर्तन की आवश्यकता होती है। यह परिवर्तन सामाजिक ढांचों को इस तरह बदल डालते हैं कि वे पहले जैसे रहते ही नहीं। विकासवादी सिद्धांतकार यह मानते हैं कि समाज तब तक विकसित होते रहते हैं जब तक विकास के चरमोत्कर्ष पर नहीं पहुंच जाते। इन विचारकों के अनुसार सामाजिक परिवर्तन समाज के लिए हितकारी होते हैं। चक्रीय सिद्धांतों का यह मानना है कि सामाजिक परिवर्तन सदा चक्रों में विभाजित होते हैं। कोई समाज पहले उन्नति की ओर बढ़ता है, फिर उन्नति के शिखर पर पहुंच जाता है और उसके बाद वहीं से उसमें क्षरण की प्रक्रिया आरंभ हो जाती है। इसे सामाजिक परिवर्तन का एक चक्र कहा जाता है। समाज इन चक्रों को बार-बार दोहराते हैं। ढांचागत क्रियात्मक सिद्धांत मानते हैं कि समाज में स्थिरता भी विद्यमान रहती है और व्यवस्था भी। परंतु कभी-कभी सामाजिक ढांचों में परिवर्तन भी आते हैं। वर्ग संघर्ष के सिद्धांतों का मानना है कि जब-जब समाज में अन्याय, अत्याचार और शोषण बढ़ जाता है तब-तब वर्ग संघर्ष जन्म लेता है और सामाजिक विकास के लिए इसका होना जरूरी है। इसके नतीजे सदैव सामाजिक हित में होते हैं। सामाजिक परिवर्तन के लिए कुछ घटक विशेष रूप से जिम्मेदार होते हैं।इनमें प्रमुख रुप से जैविक घटक, भौगोलिक घटक, प्रौद्योगिक घटक तथा सामाजिक एवं सांस्कृतिक घटक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हम यह भी देखते हैं कि सामाजिक परिवर्तन अलग-अलग गतियों से होते हैं और उनकी गतियां विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों एवं स्थितियों पर आधारित होती हैं। समाज शास्त्रियों के लिए सामाजिक परिवर्तन के मानव समाज पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करना विशेष रूप से महत्व रखता है। सामाजिक परिवर्तनों का मानव समाज पर प्रभाव दोनों प्रकार का होता है-सामाजिक हितकारी भी और सामाजिक अहितकारी भी।

## 12.8 संदर्भ

चिल्डे, वी. गॉर्डोन. (1942). व्हाट हप्पेनेड इन हिस्ट्री. मिड्डलसेक्सः पेंगुइन बुक्स

कोम्टे, अगस्ते. (1974). द पॉजिटिव फिलोसोफी. न्यू यॉर्कः एमस प्रेस

दुर्खेइम, एमिले. 1947 (1893).द डिवीजन ऑफ लेबर इन सोसाइटी. न्यू यॉर्कः द फ्री प्रेस

क्रोएबेर, ए.ल. (1958). स्टाइल एंड सविलिजतिओन्स. न्यू यॉर्कः कॉर्नेल यूनिवर्सिटी प्रेस

मर्टन, आर. के. 1968 (1948).सोशल थ्योरी एंड सोशल स्ट्रक्चर. न्यू यॉर्कः द फ्री प्रेस.

मूरे, विल्बर्ट इ. (1987). सोशल चेंज. न्यू दिल्लीरू प्रेन्टिस हॉल ऑफ इंडिया प्राइवेट लिमिटेड.मॉर्गन, लेविस हेनरी. 1963 (1877).अन्सिएंट सोसाइटी. क्लीवलैंड एंड न्यू यॉर्कः द वर्ल्ड पब्लिशिंग कंपनी.

परेटो, विल्फ्रेडो. (1935). द माइंड एंड सोसाइटी. न्यू यॉर्कः हरकोर्ट ब्रेस.

सहलीन्स, मार्शल डी. एंड एलमन आर. सर्विस. (1960) (एड्स.). एवोलुशन एंड कल्चर. अन्न आर्बरः यूनिवर्सिटी ऑफ मिशिगन प्रेस.

सोरोकिन, पिटिरिम. (1957). सोशल एंड कल्चरल डायनामिक्सः ए स्टडी ऑफ चेंज इन मेजर सिस्टम्स ऑफ आर्ट, ट्रुथ, एथिक्स, लॉ, एंड सोशल रिलेशनशिप्स. बोस्टनः पोर्टर सार्जेंट.

स्पेंसर, हर्बर्ट. (1898). द प्रिंसिपल्स ऑफ सोशियोलॉजी. 3 वॉल्स. न्यू यॉर्कः डी. एप्पलटन एंड सीओ.

स्पेंगलर, ओसवाल्ड. 1962 (1918).द डिक्लाइन ऑफ द वेस्ट. न्यू यॉर्कः क्नोफ्फ.

स्टुअर्ड, जूलियन एच. (1963). थ्योरी ऑफ कल्चर चेंजः द मेथोडोलोग्य ऑफ मुलतिलिनार एवोलुशन. अर्बनाः यूनिवर्सिटी ऑफ इलेनॉइस प्रेस.

टोंनीज, फर्डीनांड. 1963 (1887).कम्युनिटी एंड सोसाइटी. ट्रांस. सी.पी. लूमिस. न्यू यॉर्कः हार्पर एंड रौ.

टॉयनबी, अर्नाल्ड. 1946 (1934).स्टडी ऑफ हिस्ट्री. न्यू यॉर्कः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

टयलोर, एडवर्ड बी. (1871). प्रिमिटिव कल्चरः रेसर्चेस इनटू द डेवलपमेंट ऑफ माइथोलॉजी,

फिलोसोफी, रिलिजन, लैंग्वेज, आर्ट एंड कस्टम्स. लंदनः जे. मुर्रे.

वेबर, मैक्स. (1958). द प्रोटोस्टेंट एथिक एंड थे स्पिरिट ऑफ कैपिटलिज्म. ट्रांस. तालकोट पारसंस. न्यू यॉर्कः स्क्रिब्नरस .

वाइट, लेस्ली ए. (1959). द एवोलुशन ऑफ कल्चर. न्यू यॉर्कः मक्ग्रॉ-हिल.

## 12.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

**बोध प्रश्न 1**

1) अ)

2) सामाजिक परिवर्तन सामाजिक संगठन, सामाजिक ढांचों तथा सामाजिक क्रियाओं में होने वाले महत्त्वपूर्ण रूपांतरण को कहा जाता है।

**बोध प्रश्न 2**

सामाजिक परिवर्तन के तीन घटक इस प्रकार हैं-

(i) जैविक घटक (ii) प्रौद्योगिक घटक (iii) सामजिक एवं सांस्कृतिक घटक

2) हाँ

**बोध प्रश्न 3**

1) नहीं

2) सामाजिक परिवर्तन का व्यक्ति और समाज दोनों पर गहरा प्रभाव पड़ता है। अनेक समाजशास्त्री मानते हैं कि औद्योगिक समाज लोगों को एक दुसरे से अलग कर देते हैं क्योंकि सबके काम अलग अलग प्रकार के होते हैं। कुछ समाजशास्त्री यह मानते हैं कि सामाजिक परिवर्तन के कारण समाज प्रभावित होते हैं और उनमें काफी बदलाव आ जाते हैं। कुछ समाजशास्त्री ऐसे भी हैं जिनका विश्वास है कि औद्योगीकरण से सामाजिक संरचना जटिल हो जाती है और उसमें विविधता आ जाती है। औद्योगिक समाज मानव समाज तथा मानव जीवन पर रचनात्मक प्रभाव डालते हैं। कार्य विभाजन तथा विशिष्ट व्यवस्थाओं के कारण मनुष्यों के आपसी रिश्तों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ते हैं।

## शब्दावली

**उद्विकासः** एक ऐसी प्रक्रिया जिससे चीजों का रूप सरल एक से बदलकर और अधिक जटिल हो जाता है। विकासवाद का विचार ज्यादातर मानव जाति की प्रजातियों की उत्पत्ति से जुड़ा है, लेकिन समाज के लिए भी लागू किया जा सकता है

**नृजातिः** एक विशेष सामाजिक समूह के जीवन के तरीके का वर्णनात्मक विवरण।

**टोटेमः** किसी जानवर या पक्षी के रूप का एक लकड़ी या पत्थर का प्रतिनिधित्व जो लोगों के समुदाय का एक पौराणिक पूर्वज माना जाता है।

**प्रसारः** प्रसार या फैलाव या बिखराव।

**पूंजीवादीः** उत्पादन की एक औद्योगिक व्यवस्था में, उत्पादन के साधनों के मालिकों के वर्ग (जैसे, पूंजी यानी धन, संपत्ति, उपकरण, आदि) को पूंजीवादी कहा जाता है।

**AGIL:** समाज की व्यवस्था और उपव्यवस्था का विश्लेषण करना पार्सन्स का प्रतिमान है। एक संक्षिप्त नाम में एजीआईएलहै। (। अनुकूलन के लिए है), G (G लक्ष्य प्राप्ति के लिए खड़ा है), (एकीकरण के लिए है) और (अव्यक्तता के लिए एल),अर्थात - ढांचा रखरखाव और तनाव प्रबंधन)।

**प्रकार्यः** वह भूमिका जो किसी समाज/सामाजिक व्यवस्था में उसके अस्तित्व के लिए भूमिका निभाती है।

**प्रकार्यवादः** यह सामाजिक सिद्धांत है जो मानता है कि समाज के प्रत्येक घटक के कार्य हैं जो समाज के अस्तित्व के लिए अपरिहार्य हैं।

**सामाजिक व्यवस्था :** यह संबंधों का प्रतिरूपित नेटवर्क है जो एक सुसंगत पूर्ण का निर्माण करता है जो व्यक्तियों, समूहों और संस्थाओं के बीच मौजूद होता है।

**फिलोमिनाः** कोई दृश्य घटना

**लेग्यूः** भाषा सम्बंधी शब्द जिसे फरदीनंद डी सॉसर ने भाषा सम्बंधी नियम अथवा भाषा की संरचना के लिए इस्तेमाल किया था। संपूर्ण व्याकरण प्रणाली जो किसी विशेष समुदाय द्वारा बोलने में इस्तेमाल की जाती है, उसे लेंग्यू कहा जाता है।

**स्ट्रक्चरलिज़्मः** संरचनावादः संपूर्ण विश्लेषण जो भाषाई तकनीक के इस्तेमाल द्वारा उस विधि को समझाने का प्रयास करता है जिससे पूरी बात समझ में आ जाये। इसमें समूचा सम्पर्क एवं सामाजिक व्यवहार समाहित होता है।

**टोटमिज़्म : टोटेमवादः** एक धर्म, जिसमें पशु, पेड़ या अन्य चीज पूज्य माना जाता है और पूरा समुदाय उससे मनवांछित फल प्राप्त करता हैं।

**टकराव (Conflict) :** वह स्तिथि जब विभिन्न मानव समूहों में कार्य के अधिकार तथा कार्य-आधारित संबंधों को लेकर विरोध उत्पन्न हो जाता है।

**वर्ग (Class) :** लोगों का बड़ा समूह जिसके सदस्यों की स्थितियां तथा उनके हित समान होते हैं, आपस में सोच तथा क्रिया विधियों को लेकर सहमति होती है।

**शक्ति (Power) :** दूसरों को अपने अनुसार चलाने की क्षमता।

**(Authority)** : प्राधिकाररू सत्ता की न्याय संगतता प्राधिकार कहलाती है।

**दलित आंदोलनः** इसका अर्थ है कि दलितों का उनके खिलाफ होने वाले हर तरह के भेदभाव और उनके अधिकारों की रक्षा के प्रति विरोध।

**दलितः** जिन सामाजिक समूहों ने छुआछूत सहित अनेक प्रकार के भेदभाव का सामना किया है, उन्हें दलित कहा जाता है।

**समानताः** लिंग और जातीयता के आधार पर पक्षपात किये बिना सभी लोगों को प्रति निष्पक्ष आचरण की गारंटी देना।

**पदानुक्रमः** एक व्यवस्था जिसमें एक संस्था या समाज के सभी सदस्यों को उनकी परस्पर स्थिति या सत्ता के अनुसार क्रमानुगत श्रेणियों में रखना पदानुक्रम है।

**सामाजिक संरचनाः** यह सामाजिक आदर्शों और मूल्यों द्वारा संचालित स्थितियों, भूमिकाओं, संस्थानों के संदर्भ में परस्पर व्यवहार की एक व्यवस्था में व्यक्तियों और समूहों के अंतः संबंधी अधिकारों और दायित्वों का संयोजित स्वरूप है।

**स्थितिः** किसी व्यक्ति या व्यक्ति के समूह के लिए स्वतंत्रता और सम्मान की डिग्री को दर्शाता है। समाज में एक उच्च स्थिति या स्थायी और सम्मान आमतौर पर अधिकांश व्यक्तियों और समूहों द्वारा मांगा जाता है।

**असेम्बली लाइनः** यह आधुनिक फैक्टरी प्रणाली का एक तत्व हैं, जिसमें श्रमिक किसी वस्तु के विभिन्न हिस्सों पुर्जों को ''एसेम्बल'' करते अर्थात् जोड़ते हैं अथवा उनपर कुछ काम करते हैं, इसमें प्रत्येक श्रमिक का अपना निश्चित काम होता है। इससे उत्पादन में गति आती है।

**प्रतिमानहीनता (anomie)**: दर्खाइम ने इस शब्द का इस्तेमाल ऐसी स्थिति के लिए किया हैं, जिसमें व्यक्ति अपने आपको समाज में रचा-बसा हुआ महसूस नहीं करते।

**पूरक (complementary):** ऐसा काम जिससे सहायता या समर्थन मिलता है। उदाहरण के लिए नर्स की भूमिका डाक्टर की भूमिका की पूरक हैं।

**समाज का ''संघर्ष'' मॉडलः** यह समाज के प्रति एक दृष्टिकोण हैं, जिसमें व्यवस्था की बजाय उसके तनावों और संघर्षों पर बल दिया जाता है। मार्क्स के अनुसार, उत्पादन के सामाजिक संबंध तनाव एंव संघर्ष का आधार हैं।

**समाज का ''प्रकार्यात्मक'' मॉडल** इस दृष्टिकोण में समाज व्यवस्था तथा इस तथ्य पर बल दिया जाता है कि किसी प्रकार विभिन्न सामाजिक संस्थाए और उप-प्रणालियां सक्रिय रहती हैं और सामाजिक व्यवस्था को कायम रखने में योगदान देती हैं।

**विषमरूपी** यह ''समरूपी'' को विलोम है। इसका अर्थ है विविधता, अलग-अलग प्रकार। उदाहरण के लिए, भारत की जनसंख्या विषमरूपी है। यहां अलग-अलग जातियां, भाषाएं, धर्म, परम्पराएं आदि मौजूद हैं।

**अतिरिक्त मूल्य (surplus value):** जब श्रमिक अपनी श्रम शक्ति कच्चे माल पर खर्च करता है तो वस्तुओं का निर्माण होता है। इस प्रकार, श्रमिक द्वारा माल के मूल्य में वृद्धि की जाती है। श्रमिक द्वारा पैदा किया गया यह मूल्य उसे दिए गए वेतन से कहीं अधिक होता हैं। पैदा किए गए मूल्य तथा प्राप्त वेतन के बीच अंतर ''अतिरिक्त मूल्य'' कहलाता है। मार्क्स का कहना है कि इस ''अतिरिक्त मूल्य'' को पूँजीपति हड़प जाता है।

**दैवीकरणः** दिव्य स्तर प्रदान करना

**सामूहिक उत्तेजनाः** सामूहिक उत्साह की भावना। इससे व्यक्तियों के आपसी बंधन और अधिक मजबूत बन जाते है, और जिससे व समाज में अपनी सदस्यता पर गर्व करते है।

**सामूहिक प्रतिनिधानः** इससे दर्खाइम का तात्पर्य है समाज के वे सभी विचार, कल्पनाएं और परिकल्पनाएं जो समान होती है। उदाहरण के लिये सौंदर्य, सत्य, सही, गलत आदि।

**नैतिक पैग़म्बरः** ये लोगों को प्रभावशाली उपदेश देते है, जो अक्सर धार्मिक होते है। वे पुरानी सामाजिक व्यवस्था का पतन चाहते हैं जिसे वे बुरा मानते है। वे अनुयायियों को एक नयी दिशा देते है और ईश्वर से संपर्क सिद्व करने के प्रयास करते है। यहूदी धर्म, ईसाई धर्म, इस्लाम पैग़म्बरों के धर्म है।

**आनुभाविकः** अनुभव, प्रेक्षण पर आधारित

**जादू-टोना :** प्रकृति को व्यक्तिगत स्वार्थ्य हेतु प्रभावित करने का प्रयास।

लगभग सभी सरल समाजों में और कई विकसित समाजों में भी यह पाया जाता है।

**पूर्व नियति एकः** कैल्विविनिवादी (प्रोटेस्टेंट) विश्वास। इसके अनुसार यह माना जाता है कि व्यक्ति को मुक्ति के लिये ईश्वर द्वारा चुना जाता है। चुनाव ईश्वर की इच्छा पर आधारित है, और व्यक्ति इस संबंध में कुछ नहीं कर सकता है।

**तर्क संगतिः** पाश्चात्य सभ्यता का मुख्य लक्षण। इसके द्वारा जीवन को नियंत्रित, नियमबद्व बनाया जाता है। व्यक्ति अपने परिवेश का गुलान न रहकर उसका मालिक बन जाता है।

**पवित्र और लौकित क्षेत्रः** दर्खाइम के अनुसार विश्व को इन दो क्षेत्रों में बांटा जाता है। पवित्र क्षेत्र, शुद्व और उच्च स्तर का होता है। जबकि लौकिक क्षेत्र साधारण या आम वस्तुओं से संबद्व है।

**टोटमावादः** प्राचीन धर्म जिसमें किसी पशु, पेड़ पौधे आदि को समूह का पूर्वज माना जाता है, जिसकी पूजा होती है।

नौकरशाही पर आधारिततर्क-विधिक राज्य यह आधुनिक समाजों का एक प्रमुख लक्षण है। इसमें संहिताबद्व कानून और सरकार का तर्कसंगत संगठन होता है।

**ईश्वरीय आह्वान (calling):** किसी कार्य यो पेशे को ऐसा पवित्र कर्त्तव्य मान कर करना, जिसके लिए स्वंय ईश्वर ने व्यक्ति-विशेष को निर्देश दिया हो।

**कार्टेल (cartel) :** उद्योगपतियों को ऐसा समूह, जो मिलकर बाजार पर एकाधिकार या पूर्ण नियंत्रण कर लेता है।

**विश्व के प्रति विरक्तिः** विश्व के प्रति आदर-भाव की समाप्ति। लोग विश्व से अब आकर्षित और चकित नहीं होते। वे इसकी शक्तियों तथा रहस्यों को जानकर उन पर नियंत्रण कर लेते हैं, अतः उन्हें यह आकर्षक या रोमाचंक नहीं लगता।

**व्याख्यात्मक दृष्टिकोण (interpretative understanding) :** वेबर के फर्स्टेहन की पद्धति अंतर्दृष्टि जिसमें सामाजिक घटनाओं का अध्ययन कर्त्ता के दृष्टिकोण के आधार पर किया गया है।

**मशीनी या एककारणीयय संबंध (monocausal relationship):** एक ही कारण पर आधारित संबंध जैसे ऊष्मा से पानी गर्म होता है एककारणीय व्याख्या है, जहां ऊष्मा को पानी गर्म होने का एकमात्र कारण बताया गया है।

**वर्गों का ध्रुवीकरण (polarisation of classes):** वर्गों के बीच अंतर बढ जाता है कि वे पृथ्वी के दो ''ध्रुवों''(poles) की तरह एक-दूसरे के विपरीत हो जाते हैं। उनके हित, विचार, भौतिक स्थिति सभी कुछ एक दूसरे के विपरीत हो जाते है।

**सतही और सपाट (simplistic):** बड़ा ही सरल, विश्लेषण जिसमें गहन तथा जटिल पक्षों की अनदेखी कर दी गई है। जैसे ''सभी नशीली दवाइयां लेने वाले युवक/युवतियॉ टूटे परिवारों से आते है'' सपाट व्याख्या है। इसमें अन्य कारणों, जैसे दोस्तों के असर, गरीबी आदि कारकों की अनदेखी की गई है।

**स्टॉक, शेयर या बांडः** कम्पनी अथवा उद्यम शेयर, स्टॉक और बांड जारी करके आम जनता को व्यापारिक पूँजी में अंशदान को आमंत्रित करते है। इन तरीकों से जन-साधारण का कंपनी की पूँजी में एक छोटा हिस्सा हो जाता है और उसी अनुपात में लाभांश (डिविडेंड) प्राप्त होता है।

**असेम्बली लाइन :** यह आधुनिक फैक्टरी प्रणाली का एक तत्व है, जिसमें श्रमिक किसी वस्तु के विभिन्न हिस्सों पुर्जों को ''एसेम्बल'' करते अर्थात् जोड़ते हैं अथवा उनपर कुछ काम करते हैं, इसमें प्रत्येक श्रमिक का अपना निश्चित काम होता है। इससे उत्पादन में गति आती है।

**प्रतिमानहीनता (anomie) :** दर्खाइम ने इस शब्द का इस्तेमाल ऐसी स्थिति के लिए किया हैं, जिसमें व्यक्ति अपने आपको समाज में रचा-बसा हुआ महसूस नहीं करते।

**पूरक (complementary) :** ऐसा काम जिससे सहायता या समर्थन मिलता है। उदाहरण के लिए नर्स की भूमिका डाक्टर की भूमिका की पूरक है।

**समाज का ''संघर्ष'' मॉडल :** यह समाज के प्रति एक दृष्टिकोण हैं, जिसमें व्यवस्था की बजाय उसके तनावों और संघर्षों पर बल दिया जाता है। मार्क्स के अनुसार, उत्पादन के सामाजिक संबंध तनाव एंव संघर्ष का आधार हैं।

**समाज का ''प्रकार्यात्मक'' मॉडल :** इस दृष्टिकोण में समाज व्यवस्था तथा इस तथ्य पर बल दिया जाता है कि किसी प्रकार विभिन्न सामाजिक संस्थाए और उप-प्रणालियां सक्रिय रहती हैं और सामाजिक व्यवस्था को कायम रखने में योगदान देती हैं।

**विषमरूपी :** यह ''समरूपी'' को विलोम है। इसका अर्थ है विविधता, अलग-अलग प्रकार। उदाहरण के लिए, भारत की जनसंख्या विषमरूपी है। यहां अलग-अलग जातियां, भाषाएं, धर्म, परम्पराएं आदि मौजूद हैं।

**अतिरिक्त मूल्य (surplus value) :** जब श्रमिक अपनी श्रम शक्ति कच्चे माल पर खर्च करता है तो वस्तुओं का निर्माण होता है। इस प्रकार, श्रमिक द्वारा माल के मूल्य में वृद्धि की जाती है। श्रमिक द्वारा पैदा किया गया यह मूल्य उसे दिए गए वेतन से कहीं अधिक होता हैं। पैदा किए गए मूल्य तथा प्राप्त वेतन के बीच अंतर ''अतिरिक्त मूल्य'' कहलाता है। मार्क्स का कहना है कि इस ''अतिरिक्त मूल्य'' को पूँजीपति हड़प जाता है।

# सहायक पुस्तकें


**इकाई 1: उद्विकासवादी परिप्रेक्ष्य**

ऐरोन रेमंड(1965). मेन करेंट्स इन सोसिओलोजिकल थॉट.(खंड 1-2), ट्रांस. बाई रिचर्ड हॉवर्ड एंड हेलेन विवर, ग्रेट ब्रिटेनः पेलिकन बुक्स.

कुन, थॉमस एस. (1970). द स्ट्रक्चर ऑफ साईंटिफिक रिवोलुशन. शिकागोः शिकागो यूनिवर्सिटी प्रेसमलिनोस्की, ब्रोनिसला(1948). मैजिक ,साइन्स एंड रेलीजन. न्यू यॉर्क : डबल डे

पारसंस, टेलकोट(1966). सोसायटीज : कंपरेटिव एंड इवोलुशनरी पेर्स्पेक्टिव्स. एंगलवूड क्रीप्सय प्रेंटिस हाल

**इकाई 2: प्रकार्यवाद**

बोटोमोर, टी. बी.(1975). सोसिओलोजीः ए गाइड टू प्रॉब्लेम्स एंड लिटरेचर. न्यू दिल्लीः ब्लेक एंड संस।

कोजर, लूइस. (1996). मास्टर्स ऑफ सोसिओलोजिकल थाट. जयपुरः रावत

फ्रांकोइस, बौरिकौद. (1981).द सोसीओलोजी ऑफ टेलकोट पारसंस. शिकागोः यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस।

हैरिस, मर्विन एंड ओमा जॉन्सन (2007). कल्चरल अंथ्रोपोलोजी. (7जी एडिशन). बोस्टनः **पेयरसन**

पारसंस, टेलकोट (1975). द प्रजेंट स्टटस ऑफ स्ट्रक्चरल फंक्शनल थियरी इन सोसिओलोजी. इन लूइस ए. कोजर (एड). द आइडिया ऑफ सोसल स्ट्रकचर : पपेर्स इन ऑनर ऑफ रोबर्ट ए मर्टन न्यू यॉर्कः हारकोर्ट ब्रेस जोवानीच

**इकाई 3 संरचनावाद**

द फाउंडेशन ऑफ स्ट्रक्चरेलिज़्म, ससैक्स : साइमन क्लार्क 1981 द हारवैस्टर प्रैस।

द स्ट्रक्चरल स्टडी ऑफ माइथ एण्ड टोटेमिज़्म : डायमंड लीच 1967 रूटलैज़ न्यूयार्क एण्ड लंडन।

द एलीमेंट्री स्ट्रक्चर्स ऑफ फिनशिप क्लाउडी लैवी स्ट्रॉस : बीकन प्रैल, बोस्टन।

द सैवेज माइंड : क्लाउडी लैवी स्ट्रॉस 1966 : शिकागों यूनीवर्सिटी प्रैस, शिकागों।

**इकाई 4: द्वंद्व परिप्रेक्ष्य**

कॉलिंस, रैंडल. (एड) 1994. फोर सोशियोलॉजिकल ट्रडिशन्स. ऑक्सफोर्डः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

कोसर, लेविस. 1956. द फंक्शन्स ऑफ सोशल कनफ्लिक्ट. रोउटलेज.

मिल्स, सी राइट. 1956. द पावर इलीट. न्यू यॉर्कः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

स्कॉट, जॉन. 2001. पावर. कैंब्रिजः पॉलिटी प्रेस

**इकाई 5: व्याख्यात्मक समाजशास्त्र**

एरोन, रेमंड। (1967)। मेन करेंट्स इन सोशियोलॉजीकल थॉटस (खंड 2)। लंदनः पेंगुइन बुक्स।

बेंडिक्स, रेनहार्ड। (1960)। मैक्स वेबरः एन इंटीलेलेक्चुयल पोर्ट्रेट। न्यूयॉर्कः एंकर।

ब्लूमर, हर्बर्ट। (1969)। सिंबोलीक इंट्रैक्शन : पेर्सपेक्टिव एंड मेथड। बर्कले, सी एः यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस।

गिडेंस एंथोनी। (2006)। सोशियोलॉजी (पांचवां संस्करण)। कैम्ब्रिज : पॉलिटी प्रेस।

वेबर, मैक्स। (1968)। इकॉनमी एंड सोसाइटी : एन आउटलाइन ऑफ इंटरप्रेटिव सोशियोलॉजी। बर्कले, सी ए : यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस।

**इकाई 6: प्रतीकात्मक अन्तःक्रियावाद**

ब्लूमर, एच. (1969). सिंबोलीक इंटरेक्शनिज्मः पर्सपेक्टिव एंड मेथड : बरकलेः यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस।

गोफमैन एरविन (1959).द प्रजन्टेशन ऑफ सेल्फ इन एवरीडे लाइफ, न्यू यॉर्कः डबलडे

कुन, मैनफोर्ड एच. (1964). "मेजर ट्रेंड्स इन सिंबोलीक इंटरेक्शन थियरी इन द पास्ट ट्वेंटी फाइव इयर्स", द सो सीओलोजिकल क्वार्टर्लि, 5(1): 61-84.

मिड,जार्ज हर्बर्ट(1934). माइंड, सेल्फ एंड सोसाइटी फ्रम द स्टैंड पॉइंट ऑफ ए सोसल बिहाइवियरिस्ट, शिकागोः शिकगी यूनिवर्सिटी प्रेस .

**इकाई 7: नारीवादी परिप्रेक्ष्य**

चौधरी, एम. (सं.). (2004). फैमिनिज़म इन इंडिया. नई दिल्लीः काली फॉर वुमैन।

जेग्गार, एलिसन. (1983). फैमिनिस्ट पोलिटिक्स एंड ह्यूमन नेचर. ब्रिगटोनः दा हार्वेस्टर प्रेस।

टोंग, रोज़मैरी. (2009). फैमिनिस्ट थोटः ए मोर कोम्प्रिहेनसिव इंट्रोडकशन. कोलोराडोः वेस्टव्यू प्रेस।

वाल्बी, एस. (1990). थेओराइज़िग पेट्रीआर्की. यू केः बासिल ब्लैकवैल।

**इकाई 8 : दलित परिप्रेक्ष्य**

अम्बेडकर, बी.आर. (1979). कास्ट जेनेसिस, इट्स मैकेनिज्म एंड स्प्रेड. इन अम्बेडकर राइटिंग एंड स्पीचस, वॉल्यूम 1. मुंबईः एजुकेशन डिपार्टमेंट, गवर्मेंट ऑफ महाराष्ट्र।

बेटील, आंद्रे. (1971). कास्ट, क्लास एंड पावरः चेंजिंग पैटर्न्स ऑफ स्ट्रैटीफिकेशन इन तंजोर विलेज. बर्कलीः यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफ़ोर्निया प्रेस।

डूमंट, लुइस. (1999). होमो हाइरेरकीसः द कास्ट सिस्टम एंड इट्स इम्प्लीकेषंस, नई दिल्ली, ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

ओमेन, टी. के. (1990). प्रोटेस्ट एंड चेंजः स्टडीज इन सोशल मूवमेंट. नई दिल्लीः सेज पब्लिकेशन।

वाल्मीकि, ओमप्रकाश. (2003). जूठनः ए दलितस लाइफ. (ट्रांसलेटेड फ्रॉम हिंदी- जूठन), कोलकताः समय।

### इकाई 9 : श्रम विभाजनः दरर्वाइम और मार्क्स

आरों, रेमों, 1970 मेन करेंट्स इन सोशियोलॉजिकल थॉट खंड 1 और 2, पेंगगुइन बुक्सः लंदन (वेबर और दर्खाइम से संबंधित भाग देखें)

कालिन्स, रैंडल, 1986. मैक्स वेबरः ए स्केलेटन की सेज पब्लिकेशन इंकः बेवर्ली हिल्स

जोन्स, रॉबर्ट एलन, 1986. एमिल दर्खाइमः ऐन इंट्रोडक्शन टू फोर मेज़र वर्क्स सेज पब्लिेशन इंकः बेवर्ली हिल्स

### इकाई 10 : धर्मः दर्खाइम और वेबर

कालिन्स, रैंडल, 1986. मैक्स वेबरः ए स्केलेटन की सेज पब्लिकेशन इंकः बेवर्ली हिल्स

जोन्स, रॉबर्ट एंलन, 1986. एमिल दर्खाइम – ऐन इंट्राक्शन टु फोर मेजर वर्क्स सेज पब्लिकेशन्सः बेवर्ली हिल्स

दखाईम, एमिल, 1964. एलिमेंटरी फॉर्म्स ऑफ द रिलिजिंस लाइफ ऐलन एण्ड अन्विनः लंदन (पुनः मुद्रित)

### इकाई 11 : पूँजीवादः मार्क्स और वेबर

बॉटोमोर, टॉम, (सं) 1973. डिक्शनरी ऑफ मार्क्सिस्ट थॉट. ब्लैकवेलः ऑक्सफोर्ड

फ्रॉएंड, जूलियन. 1972 द सोशियोलॉजी ऑफ मैक्स वेबर पेंगुइनः लंदन

मार्क्स, कार्ल, और एंगल्स, एफ. 1938 एफ. 1938. जर्मन आइडियॉलोजी. भाग I और II लॉरेन्स एण्ड विसहॉर्टः लंदन

वेबर मैक्स, 1958. द प्रॉटेस्टेंट एथिक एण्ड द स्पिरिट ऑफ कैपिटलिज्म स्क्रिबरनः न्यूयार्क

वेबर मैक्स, 1958. द रैशनल एण्ड सोशल फाउँडेशन्स ऑफ म्यूजिक सदर्न इलिनॉय यूनिवर्सिटी प्रेसः ग्लेनको

### इकाई 12: सामाजिक परिवर्तन एवं रूपांतरण

एत्जिओनी, अमिटै. (1980). ए सोशियोलॉजिकल रीडर ऑन काम्प्लेक्स ऑर्गनाइसेशन. न्यू यॉर्कः होल्ट, रीनहार्ट एंड विंस्टन.

होर्टों, पॉल बी. एंड चेस्टर एल. हंट. 1987 (1984).सोशियोलॉजी. लंदन एट अलरू मक्ग्रॉ -हिल.

ऑगबर्न, विलियम फ. 1950 (1922).सोशल चेंज. न्यू यॉर्कः वाइकिंग.

ऑरेंस्टीन, डेविड माइकल. (1985). दी सोशियोलॉजिकल क्वेस्टः प्रिंसिपल्स ऑफ सोशियोलॉजी. सेंट. पॉल, न्यू यॉर्क एट अल : वेस्ट पब्लिशिंग कंपनी।